CHAPTER 48

SANSKRIT

Doctoral Theses

01. कुशवाहा (शैलेश कुमार)
रामाशीष पाण्डेय-कृत नाटकों का नाट्यशास्त्रीय अध्ययन ।
निर्देशक : प्रो. प्रो. रंजन कुमार त्रिपाठी
Th 29257

सारांश

संस्कृत साहित्य एक अजस्र ज्ञानप्रवाह के रूप में वैदिक युग से ही निरन्तर प्रवाहित होता आ रहा है। वेदों की ऋचाओं से प्रारम्भ होकर उपनिषदों, दर्शनों, महाकाव्यों, नाटकों तथा अन्य विविध काव्यग्रन्थों के माध्यम से इस साहित्य ने भारत की आध्यात्मिक, दार्शनिक एवं सांस्कृतिक चेतना को पुष्ट और परिष्कृत किया है। युगों-युगों से मनीषियों, कवियों एवं आचार्यों ने अपनी अद्वितीय सृजनशीलता के माध्यम से इस अमूल्य धरोहर को समृद्ध और संजीवित बनाए रखा है। इसी गौरवशाली परम्परा में आधुनिक संस्कृत साहित्य के एक मूर्धन्य कवि, मनीषी एवं विद्वान् डॉ. रामाशीष पाण्डेय का अभ्युदय हुआ। उन्होंने अपनी प्रखर प्रतिभा, गहन विद्वत्ता तथा रचनात्मक साधना के माध्यम से न केवल संस्कृत साहित्य की सनातन परम्परा को अक्षुण्ण बनाए रखा, अपितु उसे आधुनिक युग की आवश्यकताओं के अनुरूप नवीन आयाम भी प्रदान किए। उनका साहित्यिक अवदान शास्त्र और सौन्दर्य का अद्‌भुत संगम प्रस्तुत करता है, जिसमें परम्परा की गूढ़ता एवं नव्यता की सजीवता का सुन्दर समन्वय दृष्टिगोचर होता है। डॉ. पाण्डेय जी का काव्य और गद्य साहित्य न केवल संस्कृत साहित्य की गरिमा को नवीन ऊँचाइयाँ प्रदान करता है, बल्कि वह भावी पीढ़ियों के लिए भी एक अमूल्य प्रेरणा-स्रोत के रूप में प्रतिष्ठित है। उनके साहित्यिक योगदान से समस्त संस्कृत-जगत् अभिभूत है और उनके द्वारा प्रदत्त यह धरोहर युगों-युगों तक स्मरणीय एवं पथप्रदर्शक बनी ।

विषय सूची

1. रामाशीष पाण्डेय-कृत नाटकों में नाट्य-तत्व 2. रामाशीष पाण्डेय-कृत नाटकों में कथावस्तु, प्रकृति-चित्रण एवं राजनीतिक परिप्रेक्ष्य 3. रामाशीष पाण्डे-कृत नाटकों में नैतृ-विमर्श 4. रामाशीष पाण्डेय-कृत नाटकों में रसाभिव्यक्ति 5. रामाशीष पाण्डेय-कृत नाटकों में अलंकार तत्व 6. रीतिमुक्त काव्य का शिल्प वैविध्य। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथसूची।

02. आर्य (गुणेन्द्र)
अष्टाध्यायी के आलोक में उत्सन्न प्रकृतियों का पुनरुद्धार और उनकी प्रासङ्गिकता ।
निर्देशक : प्रो. सोमवीर सिंघल
Th 29370

सारांश

थम अध्याय- पाणिनीय शब्दानुशासन का परिचय इस अध्याय में पाणिनीय शब्दानुशासन का समग्र परिचय दिया गया है। प्रारम्भ में पाणिनीय तंत्र की वर्तमान अवस्था का विवेचन करते हुए प्राचीन, नव्य तथा पौष्पी प्रक्रियाओं का उल्लेख किया गया है। तत्पश्चात् अर्वाचीन व्याख्याकारों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत कर अपाणिनीय तथा शिष्ट-साधुता में गिने जाने वाले प्रयोगों की पाणिनीयता एवं प्रामाणिकता सिद्ध की गई है। "यथोत्तरं मुनीनां प्रामाण्यम्" परंपरा की समीक्षा करते हुए पं० युधिष्ठिर मीमांसक द्वारा प्रतिपादित पाणिनीय सूत्रों की वैज्ञानिक व्याख्या की आवश्यकता को स्थापित किया गया है। द्वितीय अध्याय- प्रकृति संबद्ध लोपागमादि द्वारा प्रकृत्यन्तर सद्भाव इस अध्याय में पाणिनीय तंत्र से पूर्व प्रचलित धातु, प्रत्यय एवं प्रातिपदिकों का विवेचन किया गया है, जो प्रत्यक्षतः तंत्र में समाविष्ट नहीं हैं। आचार्य पाणिनि ने आगम, आदेश, वर्णविकार तथा विशेष प्रयोगों के माध्यम से इनके सद्भाव को स्थापित किया है। वैदिक एवं लौकिक उद्धरणों के आधार पर इन उत्सन्न प्रकृतियों की सत्ता को प्रमाणित किया गया है। तृतीय अध्याय- गणकार्य का उपलक्षणत्व इस अध्याय में "बहुलमेतन्निदर्शनम्" के आधार पर धातुपाठ के दशगणों में अप्रत्यक्ष रूप से प्रयुक्त धातुओं की साधुता दर्शायी गई है। साथ ही उदात्त, अनुदात्त, स्वरित आदि पाठों की अनित्यता स्पष्ट की गई है। धातुपाठ, गण एवं नियमों के अध्ययन से उनकी शिथिलता और बहुलता स्पष्ट होती है। आकृतिगणों का स्वरूप तथा प्रातिपदिक गणों की प्रायिकता का विवेचन कर गण-अपठित शब्दों की साधुता स्थापित की गई है। चतुर्थ अध्याय- तंत्र में अनुक्त किन्तु पाणिनीय प्रयोग सिद्ध नियमान्तर इस अध्याय में ऐसे सन्धि-नियमों का विश्लेषण किया गया है जो सूत्रों में प्रत्यक्ष नहीं हैं, किन्तु प्रयोगों से ज्ञात होते हैं। विभक्ति-विन्यास की शिथिलता तथा "विवक्षातः कारकाणि भवन्ति" के आधार पर प्रयोगों का परीक्षण किया गया है। लिङ्ग-विमर्श में नियम और व्यवहार के द्वैध को रेखांकित किया गया है। साथ ही प्रायिक नियमों की व्याख्या कर यह स्पष्ट किया गया है कि अनेक नियम नित्य प्रतीत होते हुए भी प्रायिक हैं। पञ्चम अध्याय- शब्दान्तर से अभिप्राय के अभिहित हो जाने पर तद्बोधक प्रत्ययादि का अभाव इस अध्याय में "उक्तार्थानामप्रयोगः" सिद्धांत का विवेचन किया गया है। महाभाष्य आदि के संकेतों के आधार पर पं० युधिष्ठिर मीमांसक की परंपरा का अनुसरण करते हुए इसकी व्यापकता स्पष्ट की गई है। "विभाषोपपदेन प्रतीयमाने" सूत्र की वैज्ञानिक व्याख्या प्रस्तुत कर उसके उपेक्षित पक्ष को सामने लाया गया है। इन सिद्धांतों के आधार पर पाणिनीय तंत्र के क्षेत्र का विस्तार करते हुए अनेक अपाणिनीय प्रतीत होने वाले प्रयोगों की साधुता सिद्ध की गई है ।

विषय सूची

1. पाणिनीय शब्दानुशासन का परिचय 2. प्रकृतिसम्बद्ध लोपागमादि द्वारा प्रकृत्यन्तर सद्भाव 3. गणकार्य का उपलक्षणत्व 4. तन्त्र में अनुक्त किन्तु पाणिनीय प्रयोग सिद्ध नियमान्तर 5. शब्दान्तर से अभिप्राय के अभिहित हो जाने पर तद्बोधक प्रकृतिप्रत्यादि का अभाव। उपसंहार। सन्दर्भग्रंथ सूची।

03. जोशी (हेमन्त)

कालिदास कृत खण्डकाव्यों में प्रयुक्त कृदन्त प्रयोगों का भाषाशास्त्रीय विश्लेषण ।

निर्देशिका : प्रो. अन्जु सेठ

Th 29250

सारांश

कृत् के मुख्य रूप से तीन उपभेद किये गये है–कृत् कृत्य तथा उणादि । ऋतुसंहार में प्रयुक्त ल्युट्, घञ् , अच् क्यप्, क्तवा, यत्, अण्, ण्वुल्, क्, ङ्, ल्यप्, असुन्, क्विप्, णिनि, ल्यु, कि, निपातन्, अनीयर् शतृ, शानच् एवं क्त इत्यादि कृदन्तों का विश्लेषण गवेषक द्वारा किया गया है। सम्पूर्ण कार्य को शोधकर्त्ता द्वारा पांच अध्यायों में वर्गीकृत किया गया है। जिसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है – शोध प्रबन्ध के प्रथम अध्याय में गवेषक द्वारा संस्कृत व्याकरणशास्त्र : कृत् प्रत्यय विवेचन में संस्कृत भाषा साहित्य में व्याकरण शास्त्र का स्थान, महत्त्व तथा व्याकरणशास्त्र के विभिन्न परंपराओं में पाणिनी व्याकरण की महत्ता को प्रतिपादित किया गया है। द्वितीय अध्याय-कालिदासकृत खण्डकाव्य:एक अनुशीलन में कवि के दो प्रमुख खण्डकाव्यों–ऋतुसंहार तथा मेंघदूत का साङ्गोपाङ्ग परिचय प्रदान किया गया है। जिसके अन्तर्गत खण्डकाव्य का परम्परा, खण्डकाव्यों का भाषागत वैशिष्ट्य, और कालिदासीय : भाषाशास्त्रीय विश्लेषण एवं औचित्य को उद्धृत किया गया है। तृतीय अध्याय-ऋतुसंहार एवं मेघदूत में कृदन्त प्रयोग में कालिदास कृत ऋतुसंहार और मेघदूत नामक खण्डकाव्य के कृदन्त प्रयोगों के संकलन को समर्पित है। चतुर्थ और पञ्चम अध्याय में शोधार्थी ने ऋतुसंहार एवं मेघदूत में प्रयुक्त कृदन्त प्रयोगों का भाषाशास्त्रीय अध्ययन के विविध सिद्धान्तों के अनुरूप विश्लेषण प्रस्तुत किया है। जहाँ मुख्य रूप से व्याख्या, व्युत्पत्ति अर्थपरक दृष्टि से विश्लेषण किया है जिसके अन्तर्गत मुख्यरूप से कारक की दृष्टि से, लौकिक (व्यावहारिक) अर्थ की दृष्टि से विश्लेषण प्रस्तुत किया है। वाक्य प्रयोग दृष्टि के अन्तर्गत कारकार्थ, वाच्यार्थ, विभक्ति आदि के आधार पर विश्लेषण किया गया है । पुनः पदलालित्य की दृष्टि उक्त प्रत्ययों के प्रयोगों का विश्लेषण किया गया है। काव्यशास्त्रीय अथवा मुख्यरूप से शब्द व्यापार को पुष्ट करने में उक्त प्रयोग किस प्रकार सहायक है, इसे स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है। अन्त में भाषावैज्ञानिक दृष्टि को ध्यान में रखते हुए लकार, लिंग, वचन, पुरुषादि के आधार पर विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

विषय सूची

1. संस्कृत व्याकरणशास्त्र : कृत् प्रत्यय विवेचन 2. कालिदासकृत खण्डकाव्य : एक अनुशीलन 3. ऋतुसंहार एवं मेघदूत में कृदन्त प्रयोग 4. ऋतुसंहार में प्रयुक्त कृदन्त प्रयोग का भाषाशास्त्रीय अध्ययन 5. मेघदूत में प्रयुक्त कृदन्त प्रयोग का भाषाशास्त्रीय अध्ययन। उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ।

04. तिवारी (संजय कुमार)

संस्कृतव्याकरणग्रन्थेषु अनुबन्धाधिकारव्यवस्थयोः परिशीलनम् (पाणिनीयव्याकरणस्य विशेषसन्दर्भे) ।

निर्देशक : प्रो. सत्यपाल सिंह

Th 29260

सारांश

शोधसारांशः प्रास्ताविकम्- शोधप्रबन्धेऽस्मिन् साङ्केतितार्थपरिशीलनपुरस्सरमेकान्तानेकान्तपरिशीलनं निरूपितं वर्तते।'अनु पश्चात् बद्धते नियोज्यते इति अनुबन्धः' यथा- अ इ उ ण् इत्यत्र णकारः इति। अपरश्च इत्संज्ञायोग्यत्त्वमनुबन्धत्त्वम् इत्संज्ञकत्त्वम् वा अनुबन्धत्त्वमिति। अयञ्च रूढ़ोऽर्थः, १. वर्ण (अनुबन्ध)-आसञ्जनम् । २. इत्संज्ञाकरणम्। ३. इत्संज्ञक (वर्ण)-अनुबन्धनिवृत्तिः । ४. इत्संज्ञकप्रत्ययागमादेशाद्याश्रितकार्यविधानम्। आसञ्जयनम्- व्याकरणशास्त्रे सर्वादौ

वर्णानुबन्धानां संयोजनं विधीयते। नामकरणम्- व्याकरणनिकाये वर्णानुबन्धानामासञ्ज्ञनं विधाय तेषां नामनिर्धारणं क्रियते। यथा- अ इ उ ण् इत्यत्र णकारः। नामाश्रितनिवृत्तिः- अस्मिन्ननुबन्धानां टिक्तितादि संज्ञां विधाय अनुबन्धानां तन्निमित्तकनिवृत्तिर्जायते। निवृत्ताश्रितकार्यविधानम्- पुनश्च अन्ते आसञ्ज्ञनात्परं नामकरणं नामकरणानुगुणं निवृत्तिः निवृत्तेः परं निवृत्तानुबन्धाश्रितकार्याण्यपि जायन्ते। अत्र एकान्तानेकान्तयोरपि परिशीलनं विहितमस्ति। प्रत्याहारेऽनुबन्धानां कथमज्ग्रहणेषु न। आचारादप्रधानत्वाल्लोपश्च बलवत्तरः ।। यो ह्यवयवः स कदाचित् तत्रोपलभ्यत एव। अयं तु न तथा, तदर्थभूते विधेये कदाप्यदर्शनात्" कदापि अदर्शनात् अनुबन्धानाम् अवयवत्त्वं न परिलक्ष्यते। "अनुबन्धाःप्रत्याहारजन्यबोधविषयत्वाभाववन्तः लोपशास्त्रीयोद्देश्यतावच्छेदकाक्रान्तत्त्वात् यन्नैवं तन्नैवं अ इ उ ण् घटको णकारः " एतावता अनुबन्धाः एकान्ता अवयवा एवेति सिध्यते। किञ्च "एकान्ता अनुबन्धाः" इत्येव न्याय्यमिति दिक्" । अधिकारव्यवस्थापरिशीलनम्- एवमेव शोधप्रबन्धेऽस्मिन् अपरोऽपि विषयः निबद्धः वर्तते स च विषयः अधिकार इति। यस्यार्थः भवति "उत्तरोत्तरं विनियगः अधिकारः" इति।अधिकारविधानस्य नियमः पाणिनिना सुनिश्चितः स च "स्वरितेनाधिकारः" अनेन अत्र वैशष्ट्यमिदं यत् यदा सूत्रघटकपदस्याधिकारः सूत्रान्तरेऽपेक्षते तदाऽयमधिकारः अनुवृत्तिपदेनाभिधीयते। एवञ्च यदि समग्रस्य सूत्रसमुदायविशेषस्य विनियोगः सूत्रान्तरे अध्याह्रियते तदाऽयम् अधिकारसूत्रमिति कथ्यते। उक्तञ्च लक्षणे च यथा- "स्वदेशे लक्ष्यसंस्कारकवाक्यार्थबोधाजनकत्वे सति विधिशास्त्रैकवाक्यतापन्नलक्ष्यसंस्कारकवाक्यार्थ-बोधजनकत्वमधिकारसूत्रत्वम्" प्रकारत्रयं १.सिंहावलोकनम् २.मण्डुकप्लुतिः ३.गङ्गाप्रवाहश्चेति। त्रयोप्यधिकारः सादृश्यान्निश्चीयते। सादृश्यञ्च यथा- सिंहः प्रचलन्नग्रे मध्ये-मध्ये पश्चावलोकनङ्करोति तथैव कानिचन् सूत्राण्यपि तथैव व्यवहरन्ति। द्वितीयोऽपि मण्डूकप्लुतिवदेव अधिकारसूत्राण्यपि स्वकीयां गतिमाचरन्तीति। तृतीयस्तु गङ्गास्रोतवदवच्छेदावच्छेदेन अधिकारसूत्राणि समग्रेऽपि व्याकरणशास्त्रे धाराप्रवाहवत्प्रवहन्ति। उक्तञ्च- सिंहावलोकितञ्चैव मण्डुकप्लुतमेव च। गङ्गाप्रवाहवच्चापि ह्यधिकारस्त्रिधा मतः ॥

विषय सूची

1. संस्कृतव्याकरणग्रन्थेषु अनुबंधाना परिशीलनम् 2. धातुषु अवस्थितानुबन्धानां परिशीलनम् 3. प्रत्ययेषु अनुबन्धानां परिशीलनम् 4. आगमादेशेषु अनुबन्धानां परिशीलनम 5. संस्कृतव्याकरणेऽधिकारपरिशीलनम्। उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

05. पाण्डेय (श्री प्रकाश)

वर्तमानकाल में प्रचलित अग्निहोत्र एवं दर्शपौर्णमास यागों का कात्यायन-श्रौतसूत्र के सन्दर्भ में समीक्षात्मक अध्ययन ।

निर्देशक : प्रो. दया शंकर तिवारी

Th 29252

सारांश

प्रथम अध्याय में श्रौतयज्ञ तत्त्व विमर्श जिसके अन्तर्गत यज्ञ तत्त्व पर विस्तृत चिन्तन प्रस्तुत किया गया है। जिसमें यज्ञ के व्यापक अर्थ, स्वरूप, यज्ञ की भिन्नता, यज्ञ में विश्वकल्याण की अवधारण, कर्म भेद से यज्ञाग्नि के विविध नाम, होम सम्पादन में शारीरिक मुद्रा विषयक गम्भीर समीक्षा की गई है। द्वितीय अध्याय में अग्निहोत्र याग प्रकरण समीक्षा अग्निहोत्र कर्म स्वरूप, आपस्तम्ब एवं कात्यायनोक्त उद्धरण, अग्नि नित्यता विमर्श, अग्निहोत्र काल विमर्श एवं अग्निहोत्र से सम्बन्धित द्रव देवता एवं त्याग से सम्बन्धिति विविध तत्त्वों की आपस्तम्ब एवं कात्यायन श्रौतसूत्र के आधार पर समीक्षा की गई है। तृतीय अध्याय में दर्शपौर्णमास याग विषयक समीक्षा दर्शपौर्णमास याग स्वरूप, द्रव्य देवता त्याग समीक्षा, प्रायोगिक समीक्षा, पिण्डपितृ यज्ञ एवं याग क्रम भिन्नता, हविर्द्रव्य

संस्कार, दर्शपौर्णमास वेदि मीमांसा जैसे विषयों का आपस्तम्ब एवं कात्यायन श्रौतसूत्र के आधार पर समीक्षा की गई है एवं चतुर्थ अध्याय में श्रौतयज्ञ की वर्तमानकालिक उपादेयता श्रौतयज्ञ की प्रासंगिकता, यज्ञ के द्वारा प्रकृति पर पड़ने वाले प्रभाव,यज्ञ वेदि निर्माण में प्रयुक्त गणितीयअवधारणा, उपनिषदों में वर्णित यज्ञ का सर्वव्यापक स्वरूप, यज्ञ के द्वारा असाध्य कष्ट का निवारण आदि से सम्बन्धित विषयों का प्रति पादन किया गया है तथा अग्निहोत्र एवं दर्शपौर्णमास यज्ञों में प्रयुक्त होने वाले यज्ञिय पात्र एवं वेदियों के चित्र परिशिष्ट में प्रदत्त हैं। अतः राष्ट्र उत्कर्ष की कामना से अग्निहोत्र का प्रचार-प्रसार करना अत्यन्त आवश्यक है। अग्निहोत्र श्रुत्युक्त एक विशेष कर्म है जो प्रत्येक शाखा में उक्त है तथा शाखा भेद के कारण प्रतिशाखीय अग्निहोत्र में कुछ भिन्नता है जिन्हें देखकर शोधार्थी भ्रमित हो जाते हैं जबकि यही वैशिष्ट्य भारतीय संस्कृति के ज्ञान का गौरव है। उत्तर भारत में प्रसिद्ध शाखा है – शुक्ल यजुर्वेद की माध्यन्दिनी शाखा, जिससे सम्बन्धित श्रौतसूत्र है "कात्यायन" अन्य श्रौतसूत्रोक्त अग्निहोत्र के साथ कात्यायनोक्त अग्निहोत्र व दर्शपौर्णमास का अध्ययन करने से प्राचीन भारतीय संस्कृति के ज्ञान तथा आधुनिककाल में अग्निहोत्र परम्परा, इसमें निहित प्रायोगिक क्रियाएँ एवं लोककल्याण की दृष्टि से श्रौतयज्ञ की आवश्यकता के विषय में सम्यक् ज्ञान प्राप्त होता है। साथ ही साथ परिशिष्ट में क्रमशः अग्निहोत्र, दर्शपौर्णमास एवं शान्नाय दर्श में प्रयुक्त होने वाले यज्ञिय पत्रों का चित्र सारणी प्रदत्त है जिनके प्रयोग का वर्णन अध्यायों में प्रसंग के अनुसार किया गया है। यह शोध प्रवन्ध अग्निहोत्र एवं दर्शपौर्णमास यागों के प्रयोग से सम्बन्धित कर्मानुष्ठान के स्वरूप एवं श्रौतयज्ञ द्रव्य, देवता, त्याग से सम्बन्धित विविध श्रौततत्त्वान्वेषण के प्रकरण में सहायक है। भविष्य के श्रौतयज्ञ प्रयोग में जिज्ञासा रखने वाले शोधार्थियों के लिए यह शोध प्रबन्ध एक सोपान का कार्य करेगा।

विषय सूची

1. श्रौतयज्ञ तत्व विमर्श 2. अग्निहोत्र याग प्रकरण समीक्षा 3. दर्शपौर्णमास याग समीक्षा 4. श्रौतयज्ञ की वर्तमानकालिक उपदेयता। उपसंहार। परिशिष्ट सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

06. PRIYAM ASHISH (प्रियम् आशीष)

Nyāyasaṁgraha of Hemahansagaṇi: A Critical Study.
(हेमहंसगणि कृत न्यायसंग्रह: एक समीक्षात्मक अध्ययन ।)

Supervisor : Om Nath Bimali (निर्देशक : प्रो. ओम नाथ बिमली)

Th 29246

Abstract

Nyāyasaṁgraha of Hemahansagaṇi: A Critical Study Nyāyasaṁgraha is a paribhāṣā text of the Haima grammatical tradition, written in the 15th century by Hemahansagaṇi. In Sanskrit grammatical systems, paribhāṣās help us understand how other rules are applied. They function as a guide to reading grammatical texts and support proper interpretation. This thesis presents a detailed critical study of the paribhāṣās collected in the Nyāyasaṁgraha. While paribhāṣās have been widely studied in the Pāṇinian tradition, from Patañjali to Vyāḍi to Nāgeśa Bhaṭṭa, the same level of detailed study has not been carried out for other grammatical traditions. The Haima grammatical system has a rich and elaborate paribhāṣā tradition, but it has not received sufficient attention in modern research. This thesis attempts to fill that gap. The study examines fifty-seven paribhāṣās from the Nyāyasaṁgraha in detail. Each paribhāṣā is analysed through a consistent structure: meaning and application, source, historicity, observation, and conclusion. The analysis is primarily based on the commentary of Hemahansagaṇi, along with traditional commentaries by Vijaylāvaṇyasūri

and Nandighoṣavijaya. The methodology applied is both analytical and comparative. The comparisons and arguments are also drawn from paribhāṣā texts of the Pāṇinian, Kāṭantra, Cāndra, and other grammatical traditions. The thesis is organised into six chapters. The first chapter discusses the concept of paribhāṣā, the paribhāṣās of different grammatical traditions, their historical development, and the methodology. The sixth and final chapter synthesises the findings and the contribution of the Haima school to the grammatical tradition. The paribhāṣās are grouped into four chapters: rule priority and conflict resolution, interpretation of sūtras, word formation, and semantic intention. This thesis contributes to a broader understanding of grammatical reasoning and highlights the importance of paribhāṣās as a foundation of Sanskrit grammar.

Content

1. Introduction 2. Nyaya related to role priority and bahirangam antarange 3. Nayas dealing with interpretation of asabda – samjna 4. Nyaya related to word formation and derivation 5. Nyaya related to semantic limit and intent. Conclusion. Bibliography. Appendix.

7. बबीता

आचार्य विद्यानिधि शास्त्री विरचित 'संक्षिप्तं महाभारतम्' में प्रयुक्त क्रियापदों का भाषिक विश्लेषण ।

निर्देशिका : प्रो. अन्जु सेठ

Th 29253

सारांश

शोध सारांश महाभारत भारतीय सभ्यता की जातीय रचना है और जीवन, संस्कृति, धर्म और दर्शन का स्मृति ग्रंथ है। इसे पांचवे वेद और भारतीय ज्ञान का कोश भी माना जाता है। प्रस्तुत शोध कार्य संस्कृत व्याकरण के संदर्भ में है, जिसमें आचार्य विद्यानिधि शास्त्री के ग्रंथ "संक्षिप्तं महाभारतम्" के क्रियापदों का व्याकरणिक विश्लेषण विश्लेषण किया गया है। इसमें इन क्रियापदों के अर्थ और उनकी व्युत्पत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन भी शामिल है। इस शोध में धातु गण, विकरण और मूल उदाहरण के साथ उस क्रियापद के संक्षिप्त महाभारत में आये संदर्भ का उल्लेख करने के साथ उसका निर्वचन भी दिखाने का प्रयास किया गया है। शोध में कुल 194 धातुएँ प्रयुक्त हैं। कुल उदाहरण देखने पर हम पाते है वे 665 हैं। प्रत्येक गण से उल्लेखित धातुंओं की बात करें तो हम पाते हैं कि भ्वादिगण से 126, दिवादिगण से 33, चुरादिगण से 32, जुहोत्यादिगण से 12, तुदादिगण से 13, रुधादिगण से 7, क्र्यादिगण से 5, अदादिगण से 5, स्वादिगण से 4, तनादिगण से 1 धातु ली गयी है। षष्ठ अध्याय में कृदन्त क्रियापदों का विश्लेषण है। कुल 353 कृदन्त प्रयोग में सबसे अधिक प्रयोग क्त्वा और क्त प्रत्ययों के मिले हैं। इसका मुख्या कारण कथा वास्तु का भूतकालिक होना रहा है। ल्युट् और तुमुन् भी पर्याप्त मात्रा में प्रयुक्त हैं। यह विविधता दर्शाती है कि संक्षिप्त महाभारत ग्रंथ में आचार्य विद्यानिधि नें क्रियाओं का वर्णन केवल रूपात्मक नहीं बल्कि भावात्मक (क्रिया का नाम, करने वाला, कर चुका, करने के लिए, करके) सभी दृष्टियों से किया गया है। यह शोध संस्कृत व्याकरण, विशेषकर क्रियापदों और कृदन्त विश्लेषण के क्षेत्र में एक नई दिशा देता है। यह अध्ययन संस्कृत शिक्षण, व्याकरण अनुसंधान और भावी भाषाशास्त्रीय कार्यों के लिए आधारशिला सिद्ध होगा।

विषय सूची

1. आचार्य विद्यानिधि का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व 2. आ. विद्यानिधि कृत संक्षिप्त महाभारतम् का परिचय 3. संस्कृत क्रियापदों की संरचना का सामान्य परिचय 4. संक्षिप्त महाभारत के क्रियापदों का वर्गीकरण और साारणीयन 5. गणानुसार विभाजित तिङन्त का भाषिक विश्लेषण 6. गणानुसार विभाजित कृदन्त पदों का भाषिक विश्लेषण। उपसंहार एवं निष्कर्ष। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

08. मिश्रा (दुर्गेश)
पाणिनीय धातुप्रक्रिया विज्ञान का पुनर्व्यवस्थापन पौष्पी प्रक्रिया के परिप्रेक्ष्य में ।
निर्देशक : प्रो. ओम नाथ बिमली
Th 29256

साराशं

सार्वधातुक प्रत्ययों के आधार पर धातुओं का विभाजन वस्तुतः जितना वैज्ञानिक पाणिनि का सूत्रपाठ है, उतना ही अवैज्ञानिक पाणिनीय धातुपाठ है। इसमें धातु अत्यन्त अवैज्ञानिक क्रम से बैठे हैं। वस्तुतः पाणिनीय धातुपाठ का यह क्रम प्रक्रियानुसारी क्रम ही नहीं है। किन्तु सिद्धान्तकौमुद्यादि प्रक्रियाग्रन्थों में पाणिनीय धातुपाठ के क्रम को ज्यों का त्यों स्वीकार किर लिया गया है, जिससे प्रक्रिया जटिल हो गई है, किन्तु पाणिनीया पौष्पी प्रक्रिया में पाणिनीय धातुपाठ के एक भी धातु को कम न करते हुए उसे प्रक्रियानुसार पुनर्व्यवस्थित किया गया है। इससे प्रक्रिया हस्तामलकवत् हो गई है। चूँकि इसमें सार्वधातुक, आर्धधातुक प्रत्ययों को अलग अलग कर दिया गया है, अतः इस पाणिनीया पौष्पी प्रक्रिया के अपने दो अलग अलग धातुपाठ हैं। पौष्पी प्रक्रिया का पहला सार्वधातुकप्रत्ययोपयोगी धातुपाठ है, जो कि दस गणों में विभक्त है। यह धातुपाठ सार्वधातुक प्रत्ययों के लिये है। वस्तुतः दस गणों में जो धातुओं का विभाजन किया गया है, वह सार्वधातुक प्रत्ययों के लिये ही है। सार्वधातुक प्रत्यय परे होने पर ही गणानुसार विकरण लगाये जाते हैं। शेष में शप् लगाया जाता है। प्रक्रिया के लिये इस सार्वधातुकप्रत्ययोपयोगी धातुपाठ में पाणिनीय-धातुपाठ के एक भी धातु को कम न करते हुए उन सबको पाणिनीय प्रक्रिया के अनुसार पुनर्व्यवस्थित कर दिया है। इस धातुपाठ में पाणिनीयधातुपाठ में पठित अजन्तधातुओं को अन्त्यवर्ण के क्रम से रखकर उनके- १-अकारान्त, २- आकारान्त, ३-इकारान्त, ४-ईकारान्त, ५-उकारान्त, ६-ऊकारान्त, ७-ऋकारान्त, ८-ॠकारान्त और ९-एजन्त, ये नौ विभाग कर दिये हैं, किन्तु इसमें हलन्तधातुओं के पाँच विभाग अन्त्य वर्ण के क्रम से न करके उपधा के क्रम से इस प्रकार किये हैं- १-अदुपध धातु, २-इदुपध धातु, ३-उदुपध धातु, ४-ऋदुपध धातु तथा ५-शेष धातु। इस प्रकार वे पहले विश्व की समस्त शब्दराशि के कुल १४ वर्ग बनाते हैं और इनमें से एक एक वर्ग के लिये वे अनुशासन करते हैं, न कि एक एक शब्द के लिये। यही उनका सामान्यशास्त्र है। इससे जो विशेष है, वह इनका अपवाद है । अजन्त शब्दों के लिये वे अन्तिम वर्ण का आश्रय लेकर कार्य कहते हैं। अलोऽन्त्यस्य विद्ययो भवन्ति। यथा- अतो गुणे । अतो लोपः । अतो भिस ऐस् । अतोऽम् । अतो येयः । अतो हेः । अतो दीर्घो यञि । इत्यादि सूत्र अदन्त के लिये हैं। आतोऽनुपसर्गे कः । आतो मनिन्क्वनिब्वनिपश्च । आतो युच् । आतो लोप इटि च । श्नाऽभ्यस्तयोरातः । आतो युक् चिण्कृतोः , इत्यादि सूत्र आकारान्त के लिये हैं। एरच् । एरनेकाचोऽसंयोगपूर्वस्य । इतश्चानिञः । इतो मनुष्यजातेः । यू स्त्र्याख्यौ नदी । शेषो घ्यसखि इत्यादि सूत्र इकारान्त के लिये हैं। ओरावश्यके , ऋदोरप् इत्यादि सूत्र उकारान्त के लिये हैं। अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ । यू स्त्र्याख्यौ नदी । शेषो घ्यसखि । इत्यादि सूत्र इकारान्त

उकारान्त के लिये हैं। ऋहलोर्ण्यत् । ऋत उत् । ऋतो डिसर्वनामस्थानयोः । ऋदृशोऽङि गुणः । ऋतश्छन्दसि । ऋतश्च संयोगादेर्गुणः । ऋदुशनस्पुरुदंसोऽनेहसां च । ऋतश्च । ऋद्धनोः स्ये । इत्यादि सूत्र ऋकारान्त के लिये हैं। ऋदोरप् , ऋत इद्धातोः , उपधायां च , उदोष्ठ्यपूर्वस्य , ऋच्छत्यृताम् , इत्यादि सूत्र ऋकारान्त के लिये हैं। सार्वधातुकार्धधातुकयोः सूत्र इकारान्त, उकारान्त, ऋकारान्त के लिये हैं।

विषय सूची

1. पाणिनी तथा पाणिनीय परम्परा के वृत्तिकार एवं पौष्पी-प्रक्रिया 2. पौष्पीप्रक्रिया के पूर्व की धतुप्रक्रियायें 3. पौष्पी-प्रक्रियानुरूप धातु विभाजन 4. पौष्पी-प्रक्रियानुरूप प्रत्यय विभाजन 5. पौष्पी-प्रक्रिया का सार्वधतुक प्रक्रिया विज्ञान 6. पौष्पी-प्रक्रिया का आर्धधातुक प्रक्रिया विज्ञान।

09. MISHRA (DEVAKI) मिश्रा (देवकी)

Comparative Study of Mandana Miśra`s Sphota-Siddhi and Vācaspati Miśra`s Tattva-Bindu.

(कम्पेरेटिव स्टडी ऑफ मण्डन मिश्र`स स्फोट-सिद्धि एंड वाचस्पति मिश्र`स तत्त्व-बिन्दु।)

Supervisor : Om Nath Bimali (निर्देशक : प्रो. ओम नाथ बिमली)

Th 29245

Abstract

This thesis undertakes a comparative study of Maṇḍana Miśra's Sphoṭa-siddhi and Vācaspati Miśra's Tattva-bindu, focusing on their divergent theories of linguistic meaning within the framework of classical Indian philosophy. The study is situated in the broader epistemological context of śabda (verbal testimony) as a valid means of knowledge and examines the central debate between the holistic (akhaṇḍa) and compositional (khaṇḍa) approaches to meaning. Maṇḍana Miśra, influenced by Bhartṛhari, defends the sphoṭa theory, asserting that meaning is grasped as an indivisible and instantaneous cognitive flash (pratibhā), independent of the sequential perception of phonemes. In contrast, Vācaspati Miśra, aligned with the Bhāṭṭa Mīmāṃsā tradition, critiques the sphoṭa doctrine and advocates abhihitānvayavāda, according to which sentence meaning arises through the syntactic connection of individually expressed word meanings. Through close textual analysis, this research examines the philosophical foundations, logical structures, and epistemological assumptions underlying both positions. It highlights Maṇḍana Miśra's integration of linguistic theory with Advaita metaphysics, where language becomes a medium for intuitive realization, and contrasts it with Vācaspati Miśra's analytical and inferential model of verbal cognition grounded in logical economy and empirical observation. The study further analyzes points of agreement and disagreement regarding linguistic unity, the role of phonemes, and the process of meaning construction. It also reflects on the broader implications of this debate for ontology, cognition, and the philosophy of language, while indicating possible parallels with modern linguistic theories. This thesis contributes to a deeper understanding of classical Indian debates on language and meaning, demonstrating their philosophical depth and continuing relevance.

Content

1- Life and works of vācaspati Miśra and Maṇḍana Miśra 2. The Concept of Sphota in Indian Philosophy 3. Analysis of Sphotasiddhi by Maṇḍana Miśra 4. Analysis of Tattvabindu by Vācaspati Miśra 5. Comparative Analysis of Tattvabindu and Sphotasiddhi 6. Broader Implications and Critical Reflections 7. Conclusion. Bibliography

10. मीणा (कविता)

काव्यप्रकाश एवं काव्यपरीक्षा का तुलनात्मक अध्ययन ।

निर्देशिका : डॉ. श्रद्धा शुक्ला एवं डॉ. सुभाष कुमार सिंह

Th 29262

सारांश

प्रस्तुत शोध का विषय "बृहत्त्रयी का समाजशास्त्रीय अध्ययन" है। इस शोध का वास्तविक उद्देश्य बृहत्त्रयी (किरातार्जुनीयम्-शिशुपालवधम्-नैषधीयचरितम्) काव्यों में निहित तत्कालीन समाज व्यवस्था के विभिन्न रूपों तथा परिवर्तन के स्वरूप का समाजशास्त्रीय दृष्टि से विश्लेषण करना है। बृहत्त्रयी काव्यों के समाजशास्त्रीय अधययन द्वारा बृहत्त्रयीकालीन (छठी शताब्दी से लेकर बारहवीं शताब्दी तक के) भारतीय समाज, संस्कृति, विवाह आदि संस्कार, वर्ण व्यवस्था-आश्रम व्यवस्था, पुरुषार्थ-चतुष्ट्य, शिक्षा, परिवार, नारी की स्थिति इत्यादि भारतीय सामाजिक तत्त्वों का वैज्ञानिक दृष्टिकोण के आधार पर विश्लेषणात्मक व आलोचनात्मक अध्ययन करने का एक प्रयास किया गया है। बृहत्त्रयी के समाजशास्त्रीय अध्ययन से तत्कालीन भारतीय जनजीवन तथा संस्कृति के प्रत्येक पहलू का पूर्ण परिचय प्राप्त होता हैं। यह शोध-कार्य भारतीयों में अन्तर्निहित भारतीय समाज के उन्नायक तत्त्वों से स्वयं का साक्षात्कार करवाता है तथा स्वयं को भारतीय होने पर गौरवपूर्ण अनुभूति कराता है। इस शोध कार्य का सार यही है कि समाज के उत्थान और भारतीय होने की गौरवपूर्ण अनुभूति केवल भौतिक प्रगति और आधुनिकता से नहीं, बल्कि हमारी उज्ज्वल संस्कृति, संस्कार, जीवन मूल्यों, पुरुषार्थ चतुष्ट्य (धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष), नैतिकता, उत्कृष्ट ज्ञान परम्परा, स्वस्थ पारिवारिक स्वरूप, स्त्री के प्रति सम्मान एवं उसके अधिकारों की रक्षा इत्यादि सामाजिक तत्त्वों के गहन अध्ययन और पालन से ही संभव है। जहाँ आज भारतीय समाज पाश्चात्य देशों का अनुकरण करने की लालसा में अपनी उज्ज्वल संस्कृति, संस्कार, मानव-धर्म, उत्कृष्ट ज्ञान परम्परा, संयुक्त परिवार की अवधारणा इत्यादि को भूलता जा रहा है, वहीं प्रस्तुत शोधकार्य बृहत्त्रयी काव्यों के समाजशास्त्रीय अध्ययन के माध्यम से व्यक्ति को उसकी नैतिक, सामाजिक, धार्मिक और व्यक्तिगत जिम्मेदारियों की चेतना प्रदान करता है तथा समाज को अनुशासित करने की ओर एक सार्थक कदम है।

विषय सूची

1. समाजशास्त्र एवं साहित्य 2. बृहत्त्रयी एवं असके रचयिता 3. बृहत्त्रयी का सांस्कृतिक अध्ययन 4. बृहत्त्रयी और वर्णाश्रम-व्यवस्था 5. बृहत्त्रयी और पुरूषार्थ-चतुष्ट्य 6. बृहत्त्रयी की शिक्षा-पद्धति 7. बृहत्त्रयी में परिवार एवं नारी की स्थिति। उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

11. रुक्मणि

गुप्तसंवत्सरांकित संस्कृत अभिलेखों का समीक्षात्मक अध्ययन ।

निर्देशक : प्रो. उमाशंकर

Th 29255

सारांश

प्रस्तुत शोध-प्रबंध "गुप्तसंवत्सरांकित संस्कृत अभिलेखों का समीक्षात्मक अध्ययन" गुप्तकालीन भारत के इतिहास के अध्ययन हेतु अभिलेखीय साक्ष्यों पर आधारित एक विस्तृत एवं विश्लेषणात्मक शोध है। अभिलेख प्राचीन इतिहास के सर्वाधिक प्रामाणिक स्रोत माने जाते हैं, क्योंकि इनमें तत्कालीन शासन-व्यवस्था, दान-प्रथा, धार्मिक आस्था, समाज की संरचना, भाषा, लिपि, कला तथा प्रशासनिक प्रणाली का प्रत्यक्ष, समकालीन और तथ्यपरक विवरण उपलब्ध होता है। गुप्तकाल (चतुर्थ से षष्ठ शताब्दी ई.) भारतीय इतिहास का वह कालखंड है जिसे राजनीतिक स्थिरता, सांस्कृतिक उत्कर्ष एवं बौद्धिक प्रगति के कारण 'स्वर्णयुग' की संज्ञा दी गई है। इस काल में संस्कृत भाषा को राजकीय प्रतिष्ठा प्राप्त हुई तथा अभिलेखीय परंपरा का व्यापक विकास हुआ। गुप्त शासकों द्वारा प्रयुक्त गुप्त संवत्, जिसकी गणना चन्द्रगुप्त प्रथम के राज्यारोहण (लगभग 319–320 ई.) से प्रारम्भ मानी जाती है, न केवल गुप्तवंशी शासकों द्वारा, अपितु उनके समकालीन एवं अधीनस्थ अनेक राजवंशों द्वारा भी अपनाया गया। अतः गुप्तसंवत्सरांकित अभिलेख ऐतिहासिक काल-निर्धारण की दृष्टि से विशेष महत्त्व रखते हैं। इस शोध-कार्य में उत्तर भारत से प्राप्त गुप्तसंवत्सरांकित संस्कृत अभिलेखों का तिथि, भाषा, लिपि (मुख्यतः ब्राह्मी), आधार-सामग्री (शिला, स्तंभ, ताम्रपत्र, गुफा, मूर्ति आदि), शिल्प एवं विषयवस्तु के आधार पर समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। अध्ययन के माध्यम से गुप्तवंश तथा अन्य समकालीन राजवंशों की राजनीतिक स्थिति, प्रशासनिक संगठन, केन्द्रीय एवं प्रांतीय शासन-व्यवस्था, भूमि-दान एवं कर-प्रणाली, तथा सैन्य संरचना का विश्लेषण किया गया है। धार्मिक दृष्टि से इन अभिलेखों में वैष्णव, शैव, बौद्ध, जैन, सूर्य, शक्ति एवं कार्त्तिकेय पूजा के प्रमाण प्राप्त होते हैं, जो गुप्तकालीन धार्मिक सहिष्णुता एवं समन्वय की नीति को स्पष्ट करते हैं। सामाजिक अध्ययन से वर्ण-व्यवस्था, स्त्रियों की अपेक्षाकृत उन्नत स्थिति, शिक्षा, कला, वास्तुकला तथा साहित्यिक समृद्धि का स्पष्ट चित्र उभरकर सामने आता है। निष्कर्षतः यह शोध-प्रबंध गुप्तकालीन भारत के इतिहास को अभिलेखीय साक्ष्यों के आलोक में समग्र एवं संतुलित रूप में प्रस्तुत करता है। साथ ही यह अध्ययन अभिलेख-आधारित इतिहास-लेखन की पद्धति को सुदृढ़ करते हुए गुप्तकालीन राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक जीवन की गहन समझ प्रदान करता है।

विषय सूची

1. उत्तर भारत में गुप्त-सम्वत् तिथि को अंकित करने वाले शासक 2. उत्तर भारत में प्राप्त गुप्त-सम्वत् के अभिलेख, अभिलेखें की सूची, परिचय 3. उत्तर-भारत से प्राप्त गुप्त-सम्वत् के अभिलेखों का धार्मिक महत्व 4. उत्तर-भारत से प्राप्त गुप्त-सम्वत् के अभिलेखों का प्रशासनिक महत्व 5. उत्तर-भारत से प्राप्त गुप्त-सम्वत् के अभिलेखों का आर्थिक महत्व 6. उत्तर-भारत से प्राप्त गुप्त-सम्वत् के अभिलेख में वर्णित समाज का महत्व। उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची। परिशिष्ट।

12. शिवानन्द (चौटि)

रङ्गाचार्यप्रणीतशुकसन्देशकाव्यस्य शास्त्रीयं समीक्षणम् (साहित्य-व्याकरण-दर्शनशास्त्राणि आधृत्य) ।

निर्देशक : डॉ. एम. किशन

Th 29410

सारांश

संस्कृतसाहित्ये काव्यरचनायां विविधप्रवृत्तयः प्राचीनकालात् एव दृश्यन्ते। काव्यं न केवलं कलारूपं, अपि तु भावप्रकाशनस्य, संस्कृतिपरम्परायाः च माध्यमं भवति। तत्र विशेषतः

दूतकाव्यपरम्परा एकं विलक्षणं रूपं समुपन्यस्यति, यत्र नायकः स्वप्रियायै वा प्रियतमाय दूतं प्रेषयति, सन्देशस्य माध्यमेन आत्मनः भावान् प्रकटीकरोति। दूतकाव्येषु शुकसन्देशः नामकं काव्यमेकं विशिष्टस्थानं धारयति। एतत् काव्यं दाक्षिणात्यकविना रङ्गाचार्येण विरचितं, यः व्याकरण-साहित्य-अलङ्कारशास्त्रेषु निपुणः आसीत्। अस्य काव्यस्य प्रथमे भागे नायकः विरहपीडितं शुकं दूतं कृत्वा स्वप्रियायै सन्देशं प्रेषयति, मार्गवर्णनं, नगर-मन्दिर-तीर्थ-संस्कृतिसूचनाः च सूक्ष्मतया चित्रिताः। द्वितीयभागे नायिकाया विरहव्यथा, प्रेमोच्छ्वासः, करुणाशृङ्गाररूपा भावसङ्गतिश्च अत्यन्तं हृदयग्राहिण्या प्रस्तूयते। एतत् काव्यं केवलं प्रणयसन्देशरूपं न, अपि तु संस्कृतस्य, दक्षिणभारतीयसंस्कृतेः सांस्कृतिकसमन्वयस्य च साक्षी इति दृश्यते। एवं विचार्य मया शुकसन्देशः नामकं दूतकाव्यं स्वशोधप्रबन्धस्य विषयत्वेन स्वीकृतम्। यतः एषः काव्यप्रकारः संस्कृतसाहित्ये रस-छन्द-व्याकरणशैली-सांस्कृतिकदृष्ट्या च अनुसन्धानयोग्यः। अस्मिन् प्रबन्धे मया तस्य काव्यस्य ऐतिहासिकपृष्ठभूमिः, रचनाकारपरिचयः, दूतकाव्यपरम्परासम्बन्धः, शिल्पसौन्दर्यम् तथा भावप्रधानता इत्यादीनां सर्वेषां विषयाणां समीक्षात्मकमध्ययनं कर्तुं प्रयत्नः क्रियते। अद्यतनकाले यदा संस्कृतकाव्येभ्यः नूतनदृष्ट्या अध्ययनप्रवृत्तिः वर्धते, तदा शुकसन्देशकाव्यस्य अध्ययनम् अत्यन्तम् आवश्यकं वर्त्तते। एतत्काव्यं केवलं मेघदूतानुकरणम् इति न, अपि तु स्वतन्त्रदूतकाव्यरूपेण मौलिकशिल्पसौन्दर्यं वहति। अस्मिन् काव्ये तेलङ्गाण-आन्ध्रप्रदेशयोः भौगोलिक- सांस्कृतिक-ऐतिहासिक-धार्मिकचेतनाः द्रष्टुं शक्याः। एतत् काव्यं समाजे पर्याप्तमान्यतां न भजते। एतस्मात् कारणात् अस्माकं कर्तव्यं भवति यत् एतादृशम् दुर्लक्षितं किन्तु उत्कृष्टं संस्कृतकाव्यम् अध्ययनविमर्शेन पुनः प्रकाश्यते। अतः "रङ्गाचार्यप्रणीतशुकसन्देशकाव्यस्य शास्त्रीयसमीक्षात्मक-मध्ययनम् (साहित्य-व्याकरण-दार्शनिकदृष्ट्या)" अस्मिन्गवेषणप्रबन्धे शुकसन्देशस्य रचनाकारः कविरङ्गाचार्यः, काव्यस्य ऐतिहासिकपृष्ठभूमिः, रचनाशैली, छन्दोविन्यासः, रसभावः, तथा कालिदासीय-प्रभावस्य तुलनात्मकसमीक्षा इत्येतानि तत्त्वानि विधिवत् विवेच्यन्ते। एवं गवेषणप्रयोजनं तु न केवलं काव्यविश्लेषणपरं, अपि तु संस्कृतसाहित्ये उपेक्षितदूतकाव्यपरम्परायाः पुनराविष्काराय समर्पितम् इति निष्कर्षतः मन्तव्यम्। संस्कृतसाहित्ये दूतकाव्यानां परम्परा दीर्घा अस्ति, तथापि शुकसन्देशः इति काव्यम् अद्यापि विद्वत्समाजे न्यूनपरिचितम्। यद्यपि अनेन काव्येन मेघदूतस्य आदर्शः अनुसृतः, तथापि तत्र मौलिकतायाः भावनायाः च नूतनत्वं दृश्यते। अतः अस्य अध्ययनं केवलम् अनुकृति-परिशीलनं न, अपि तु रचनाशिल्पः, रसः, सांस्कृतिकभावना, इतिहासदृष्टिश्च एतेषां समेषां समालोचनं भवति। एतदर्थं शोधप्रबन्धः अयं मया समीक्षात्मकदृष्ट्या प्रवर्त्यते। अस्य प्रबन्धस्य लक्ष्यं शुकसन्देशकाव्यस्य ऐतिहासिकं, भाषिकं, काव्यशास्त्रीयं, भावात्मकं, सांस्कृतिकेत्यादीनां दृष्टीनां सूक्ष्ममवलोकनम्। अयं प्रबन्धः सप्तभिः अध्यायैः संगठितः अस्ति। एवं मम अत्र नूतना प्रवृत्तिः शुकसन्देशकाव्यस्य मूल्याङ्कनेन दूतकाव्यपरम्परायाः उपेक्षितांशाः पुनः प्रकाश्यन्ते, सहृदयानां च रसास्वादाय नवमार्गः उद्घाट्यते।

विषय सूची

1. शुकसन्देशस्ताठाणेता, प्रकृतरचनाया : ऐतिहासिकी राजैनैतिकी च पृष्ठभूमि 2. शुकसन्देशकाव्ये भैगोलिक–सांस्कृतिकसमीक्षणम् 3. शुकसन्देशकाव्यस्य काव्यशास्त्रीयसमीक्षणम् 4. शुकसन्देक्य व्याकरणशास्त्रीयसमीक्षणम् 5. शुकसन्देशकाव्यस्य दार्शनिकदृष्टया समीक्षणम्। उपसंहार। परिशिष्टम्। संदर्भग्रंथसूची।

13. सन्जू

वामनजयादित्य विरचित काशिकावृत्ति एवं शाकटायन विरचित अमोघावृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन (समास प्रकरण के सन्दर्भ में) ।

निर्देशक : डॉ. कॅवर सिंह

Th 29411

सारांश

जब दो या दो से अधिक शब्द मिलकर एक यौगिक एवं संक्षिप्त शब्द का निर्माण करते हैं तो यह क्रिया समास कहलाती है । समास का तात्पर्य है-"संक्षिप्तीकरण" । "समास" शब्द का अर्थ ही है- पास रखना या छोटा करना । भाषा के प्रयोग में सामासिक शब्दों के प्रयोग से संक्षिप्तता और शैली में उत्कृष्टता एवं सटीकता आती है । उदाहरण के लिए "राजा का पुरुष" कहने के स्थान पर "राजपुरुष" कहना अधिक उपयुक्त है । संस्कृत व्याकरणिक परंपरा में, हमें पाणिनि प्रणाली के ग्रन्थ पर पर्याप्त मात्रा में अध्ययन और शोध कार्य मिलते हैं, लेकिन जैन व्याकरण के स्वतंत्र ग्रन्थ विद्वानों के बीच न्यून प्रसिद्ध है । शाकटायन विरचित अमोघावृत्ति संस्कृत व्याकरण ग्रंथों में से एक है और इसे प्रकाश में लाया जाना चाहिए । अमोघावृत्ति एवं काशिकावृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन उन विद्वानों के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण होगा जो जैन व्याकरण परंपरा एवं पाणिनि परम्परा में परस्पर विरोधी एवं समान सूत्रों के अनुप्रयोग को समझना चाहते हैं । प्रस्तावित शोध "शाकटायन विरचित अमोघावृत्ति एवं जयादित्य और वामन विरचित काशिकावृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन (समास प्रकरण के सन्दर्भ में)" का उद्देश्य अमोघावृत्ति एवं काशिकावृत्ति में प्रस्तुत जैन व्याकरण परंपरा एवं पाणिनि परम्परा के समास प्रकरण का विश्लेषण करना है ।

विषय सूची

1. समास का सैद्धान्तिक स्वरूप एवं शोध सर्वेक्षण 2. काशिकावृत्ति में समास का विवेचन 3. अमोधावृत्ति में समास का विवेचन 4. कशिकावृत्ति एवं अमोधावृत्ति में समास का दार्शनिक अध्ययन 5. कशिकावृत्ति एवं अमोधावृत्ति में समास का भाषावैज्ञानिक अध्ययन। 6. काशिकावृत्ति एवं अमोधावृत्ति का समास के सन्दर्भ में तुलनात्मक अध्ययन उपसंहार। परिशिष्ट्। प्रस्तुत शोधपत्रों की सूची। प्रकाशित शोधपत्रों की सूची।

14. सरकार, चिरंजीत

भविष्यदत्त महाकाव्य में काव्यसौन्दर्य : समीक्षात्मक अध्ययन ।

निर्देशक : प्रो. टेक चंद मीना

Th 29259

सारांश

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध का शीर्षक भविष्यदत्त महाकाव्य में काव्यसौन्दर्य : समीक्षात्मक अध्ययन" है। शोध-प्रबन्ध को छह अध्यायों में विभाजित किया गया है। उक्त शोध-प्रबन्ध में उन तत्त्वों का वर्णन किया गया है, जिन तत्त्वों के द्वारा काव्य की सौन्दर्यता बढ़ती है। इसीलिए उन तत्त्वों को सौन्दर्य विधायक तत्त्व कहा जाता है। महाकाव्य के प्रारम्भ में महाकवि अपनी कला का प्रदर्शन कराते हुए तथा पाठकों को शृङ्गार आदि रसों का आनन्द देते हुए अध्यात्म की ओर ले जाते है। इस प्रकार कवि सभी प्रकार से निपुण जान पडता है। इस शोध-प्रबन्ध के प्रारम्भ में भूमिका दिया गया है, जिसके अन्तर्गत महाकाव्य का स्वरूप, सौन्दर्य विधायक तत्त्व तथा महाकवि का

परिचय का वर्णन किया गया है। प्रथम अध्याय में कथानक सौन्दर्य का वर्णन किया गया है, जिसमें मूल कथा का स्वरूप, सर्गानुसारि विन्यास एवं सन्धि-सन्ध्यङ्ग के अनुसार विन्यास का वर्णन किया गया है। सन्धि-सन्ध्यङ्ग वर्णन में आचार्य धनञ्जय को प्रधानता दी गई है। द्वितीय अध्याय में महाकाव्य में प्रकृतिगत सौन्दर्य का वर्णन है, जिसमें उक्त महाकाव्य में प्रतिपादित वन, पर्वत, नदी, सरोवर, नगर आदि का वर्णन किया गया है। तदनन्तर तृतीय अध्याय में पात्रों का चारित्रिक सौन्दर्य का वर्णन है। इसमें नायक भविष्यदत्त का महान् चरित्र का वर्णन किया गया है, नायिका का प्रेम वर्णन किया गया है, साथ ही अन्य पात्रों का भी (प्रतिनायक, माता कमला आदि का संक्षिप्त वर्णन किया गया है। चतुर्थ अध्याय में भविष्यदत्त महाकाव्य में प्रयुक्त रसों का वर्णन किया गया है। इसमें नव रस के साथ-साथ आचार्य विश्वनथ का वत्सल रस का भी अनेकों उदाहरण प्राप्त है। पंचम अध्याय में महाकाव्य में प्रयुक्त अलङ्कार सौन्दर्य का वर्णन किया गया है। जिन्हें निकालने में किसी विशेष प्रयास की आवश्यकता नहीं होती। अन्तिम अध्याय में अन्यान्य काव्यसौन्दर्य तत्त्वों का वर्णन किया गया है। जिसमें रीति, गुण, वक्रोक्ति और औचित्य शामिल है। महाकवि प्रत्येक सौन्दर्य तत्त्व निरूपण में अपनी निपुणता का परिचय दिया है। अन्त में उपसंहार एवं सन्दर्भ-ग्रन्थ सूची देकर प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध का समापन किया गया है।

विषय सूची

1. भविष्यदत्त महाकाव्य में कथानक सौन्दर्य 2. महाकाव्य में प्रकृतिगत सौन्दर्य 3. महाकाव्य में चारित्रिक सौन्दर्य 4. रसगत में भावगत सौन्दर्य 5. अन्याय प्रमुख प्रस्थानों के आलोक में भविष्यदत्त महाकाव्य 6. उत्तर-भारत से प्राप्त गुप्त-सम्वत् के अभिलेख में वर्णित समाज का महत्व। निष्कर्ष। उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।